

यजुर्वेदका संक्षिप्त परिचय

(श्रीऋषिगामजी रेग्मी, अथर्ववेदाचार्य)

शैलीकी दृष्टिसे वैदिक मन्त्रोंका विभाजन ऋक्, यजुः और सामके रूपमें तीन भागोंमें हुआ है। छन्दोंमें निबद्ध मन्त्रोंका नाम ऋग्वेद, गद्यात्मक मन्त्र-समुदाय यजुर्वेद और गानमय मन्त्र सामवेदके नामसे प्रसिद्ध हैं।

निरुक्तकार यास्क 'यजुः' शब्द 'यज' धातुसे निष्पत्र मानते हैं (निरुक् ७। २०), इसका भाव यह है कि यजुर्वेदसे यज्ञका स्वरूप-निर्धारण होता है— 'यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उ त्वः' (ऋक् ० १०। ७१। ११)। अतः याज्ञिक दृष्टिसे यजुर्वेदका अपर नाम 'अध्वर्युवेद' भी है।

सम्प्रदायके आधारपर यजुर्वेद दो भागोंमें विभक्त है। सामान्यतः आदित्य-परम्परासे प्राप्त मन्त्रसमुदायको 'शुक्लयजुर्वेद' और ब्रह्म-परम्पराके द्वारा प्राप्त मन्त्रोंको 'कृष्णयजुर्वेद' कहते हैं।

शुक्लत्व और कृष्णत्वका भेद

यजुर्वेदके शुक्लत्व और कृष्णत्वके विषयमें एक पौराणिक आख्यायिका मिलती है। यह आख्यायिका महीधरभाष्यकी भूमिकामें इस प्रकार उद्धृत है—

'सर्वप्रथम सत्यवतीके पुत्र पाराशर वेदव्यासने एक ही वेद-संहिताका चार भागोंमें विभाजन करके ऋक्, यजुः, साम और अथर्व नामके चारों वेदोंको क्रमशः पैल, वैशम्पायन, जैमिनि और सुमन्तु नामके चार शिष्योंको पढ़ाया'। उसके बाद वैशम्पायनने याज्ञवल्क्यादि अपने शिष्योंको यजुर्वेद श्रवण कराया। किसी समय महर्षि वैशम्पायनने याज्ञवल्क्यसे

कुद्ध होकर अपने द्वारा पढ़ायी हुई वेदविद्याको त्यागनेका आदेश दिया। गुरुके आज्ञानुसार याज्ञवल्क्यने अपने योगबलके द्वारा विद्याको मूर्तरूप करके वमन किया। उक्त वमन किये हुए यजुषोंको वैशम्पायनके अन्य शिष्योंने तित्तिरि (पक्षिविशेष)-रूप धारण करके भक्षण कर लिया। तबसे वे यजुर्मन्त्र 'कृष्णयजुर्वेद'के नामसे प्रसिद्ध हुए। दूसरी ओर दुःखित याज्ञवल्क्यने कठोर तपस्या करके आदित्यको प्रसन्न किया। तपसे प्रसन्न होकर सूर्यने वाजि (अश्व)-रूप धारण करके दिनके मध्याह्नमें यजुषोंका उन्हें उपदेश दिया। इस प्रकार आदित्यसे प्राप्त यजुष् शुक्ल कहलाये। दिनके मध्याह्नमें प्राप्त होनेके कारण 'माध्यन्दिन' तथा वाजिरूप आदित्यसे उपदिष्ट होनेसे 'वाजसनेय' कहलाये।' आचार्य सायण भी इस मतको स्वीकार करते हैं (देखिये काण्व भा० भू० श्लोक ६—१२)।

इस आख्यायिकामें यजुर्वेदके शुक्लत्वके विषयमें प्रस्तुत मत जितना मात्र्य है, उतना कृष्णत्वके विषयमें नहीं, क्योंकि शतपथब्राह्मणके वचन 'आदित्यानीमानि शुक्लानि यजूषि वाजसनेयेन याज्ञवल्क्येनाख्यायन्ते' (१४। ९। ४। ३३)-के अनुसार महर्षि याज्ञवल्क्यने आदित्यसे शुक्लयजुषोंको प्राप्त किया है, यह बात स्पष्ट है। किंतु कृष्णत्वके विषयमें जो मत प्रस्तुत है, वह रूपकात्मक प्रतीत होता है, क्योंकि मूर्त वस्तुकी तरह अमूर्त विद्याका वमन तथा भक्षण योगबलसे ही सम्भव होता है। अतः यजुर्वेदके कृष्णत्वके विषयमें अन्य युक्तियोंका आश्रय

लेना जरूरी है। इस विषयमें 'वेदशाखापर्यालोचनम्' में 'यजुषां कृष्णत्वविचारः' शीर्षकके अन्तर्गत ग्यारह युक्तियाँ प्रस्तुत की गयी हैं। यहाँ भी इसीके कुछ अंशोंका अनुवाद प्रस्तुत है—

१-शुक्लयजुर्वेदीय लोग वेदके उपार्कममें श्रावण शुक्लपक्षकी चतुर्दशीयुक्त पूर्णिमाको ग्रहण करते हैं। किंतु कृष्णयजुर्वेदीय लोग भाद्रपदकृष्णपक्षकी प्रतिपद-युक्त पूर्णिमाको ग्रहण करते हैं। इस प्रकार उपार्कममें कृष्णपक्षको प्रधान माननेके कारण तैत्तिरीयादि शाखाओंका नाम 'कृष्णयजुर्वेद' रहा।

२-ऋषि, देवता तथा छन्दोंके बोधक तैत्तिरीयोंके सर्वानुक्रमणी ग्रन्थके अस्तव्यस्तताके कारण भी कृष्णत्व सम्भव है।

३-कृष्णयजुषोंके श्रौत-सूत्रादि कल्पग्रन्थोंके आचार्य बहुत हैं। उन आचार्योंके द्वारा रचित विभिन्न कल्पसूत्रोंमें एक ही मन्त्रका विभिन्न स्थानपर विनियोग बताया गया है। जैसे—तैत्तिरीय संहिताकी प्रथम कण्डिकामें 'ध्रुवा अस्मिन् गोपतौ स्यात्' (१। १। १) इत्यादि मन्त्रका विनियोग बौद्धायनने अर्धवर्तुर्कृत यजमानके आज्यावेक्षणमें किया है, किंतु आपस्तम्भने गायोंके प्रत्यावर्तनमें विनियोग किया है। इस प्रकार विनियोगमें एक ही मन्त्रकी विविधता होनेसे प्रयोग-सांकर्यके कारण यजुर्वेदका कृष्णत्व हो गया।

४-कृष्णयजुर्वेदमें संहिता और ब्राह्मणके पृथक्-पृथक् अभिधान केवल प्रसिद्धमूलक दिखायी पड़ते हैं। इस वेदके संहिता-भागमें ब्राह्मण-भाग और ब्राह्मण-भागमें संहिता-भाग मिला हुआ है। शुक्लयजुर्वेदकी तरह संहिता-भाग तथा ब्राह्मण-भागका अलग-अलग विभाजन नहीं है। इस तरह मन्त्र और ब्राह्मणकी संकीर्णताके कारण इसका कृष्णत्व होना प्रत्यक्ष है।

५-कृष्णयजुर्वेदमें सारस्वत और आर्ये करके पाठकी द्विविधता दिखायी पड़ती है। इसलिये पाठ-द्वैविध्यसे अनियत-क्रम होनेके कारण इसका कृष्णत्व होना सम्भव है।

६-यजुर्वेदमें मन्त्रकी अपूर्णता भी कृष्णत्वका कारण है। इसमें याज्ञिक लोग कल्पसूत्रोंसे मन्त्रोंकी पूर्ति करते हैं। जैसे— 'सं वपामि' (तै० सं० १। १। ८)—यहाँ कल्पसूत्रके अनुसार 'देवस्य त्वा'" "अग्नये अग्नीषोमाभ्याम्" यह मन्त्र देवतानुसार प्रयोग किया जाता है, किंतु शुक्लयजुर्वेदके मन्त्र-प्रयोगमें कल्पकी अपेक्षा नहीं होती है (मा० सं० १। २१)।

इस प्रकार यजुर्वेदके कृष्णत्वके कारणोंमें संहिता और ब्राह्मणकी संकीर्णता, मन्त्र-विनियोगकी विविधता, संहितापाठकी द्विविधता, मन्त्रोंकी अपूर्णता तथा कुछ ग्रन्थोंकी अस्तव्यस्तता प्रमुख हैं।

यजुर्वेदकी शाखाएँ

महाभाष्यकार पतञ्जलिके अनुसार यजुर्वेदकी १०१ शाखाएँ थीं। जिनमें कृष्णयजुर्वेदकी ८६ और शुक्लयजुर्वेदकी १५ शाखाएँ हैं। इनमें आजकल सभी शाखाएँ उपलब्ध नहीं होतीं।

शुक्लयजुर्वेदीय शाखाएँ

चरणव्यूहादि ग्रन्थोंमें उक्त शुक्लयजुर्वेदकी १५ शाखाओंका नाम आचार्य सायणने काण्वभाष्य-भूमिकामें इस प्रकार दिया है—

काण्वाः, माध्यन्दिनाः, शापेयाः, तापायनीयाः, कापालाः, पौण्ड्रवत्साः, आवटिकाः, परमावटिकाः, पाराशर्याः, वैथेयाः, वैनेयाः, औथेयाः, गालवाः, वैजवाः, कात्यायनीयाः।

नामकी भिन्नता विभिन्न ग्रन्थोंमें दिखायी पड़ती है। इनमें आलकल काण्व और माध्यन्दिन केवल दो ही शाखाएँ उपलब्ध हैं।

कृष्णयजुर्वेदकी शाखाएँ

कृष्णयजुर्वेदकी ८६ शाखाओंमें आज केवल ४ शाखाएँ उपलब्ध हैं। जिनके नाम इस प्रकार हैं— (१) तैत्तिरीय, (२) मैत्रायणीय, (३) कठ और (४) कपिष्ठल।

[क] शुक्लयजुर्वेदका परिचय

महर्षि याज्ञवल्क्यने सूर्यकी आराधनासे प्राप्त शुक्लयजुर्वेदका अपने काण्वादि १५ शिष्योंको उपदेश दिया। उन्होंने भी अपने-अपने शिष्योंको प्रवचन किया। शाखापाठके आदि-प्रवचनकर्ता याज्ञवल्क्यके १५ शिष्य होनेके कारण तत्त-नामसे १५ शाखाओंकी प्रसिद्ध हो गयी। इन १५ शाखाओंके अध्येता सभी लोग वाजसनेयी नामसे भी प्रसिद्ध हैं।

वाजसनेय-अभिधानका कारण—

शुक्लयजुर्वेदीयोंको वाजसनेय कहे जानेके विषयमें विभिन्न कारण हो सकते हैं। जिनमें दो प्रमुख हेतुओंका उल्लेख यहाँ किया जाता है—

१-काण्वसंहिताकी भाष्योपक्रमणिकामें आचार्य सायण 'वाजसनेय' पदकी ऐसी व्याख्या करते हैं—'अन्नं वै वाजः' इस श्रुतिके अनुसार 'वाज' का अर्थ अन्न है। 'षणु' दाने धातुसे 'सनि' शब्द बनता है। अतः 'वाजस्य=अन्नस्य,

सनि:—दानं यस्य महर्षेरस्ति सोऽयं वाजसनि:, तस्य पुत्रो वाजसनेयः (वाजसनि+ढक्)’—इस व्युत्पत्तिके अनुसार जिसने अन्नदान किया है, वह वाजसनि है और उसीके पुत्रका नाम वाजसनेय है। महर्षि याज्ञवल्क्यके पिता अन्नदान करते थे। अतः वाजसनेय याज्ञवल्क्यका दूसरा नाम है।

२—दूसरा कारण यह भी हो सकता है कि सूर्यका नाम वाजसनि भी है। अतः सूर्यके छात्र होनेके कारण याज्ञवल्क्यको वाजसनेय कहते हैं।

इस प्रकार ‘वाजसनेय’ शब्द शुक्लयजुर्वेदके आदिप्रवक्ता महर्षि याज्ञवल्क्यका अपर नाम है। इसी तरह वाजसनि शब्द शुक्लयजुर्वेदका वाचक है तथा इसके अनुयायी लोग वाजसनेयि हैं।

१-माध्यन्दिन-शाखा—

याज्ञवल्क्यके १५ शिष्योंमें माध्यन्दिन नामके भी एक शिष्य हैं। उन्होंने जिन यजुषोंका प्रवचन किया, वह माध्यन्दिन-शाखाके नामसे प्रसिद्ध है। माध्यन्दिन-शाखाके नामकरणके विषयमें दूसरा हेतु यह भी दिया जाता है कि वाजिरूप सूर्यके द्वारा याज्ञवल्क्यने दिनके मध्यकालमें यजुष् मन्त्रोंको प्राप्त किया था, इसलिये यह शाखा माध्यन्दिन कहलायी। इन दोनों हेतुओंमें प्रथम कारण ही उपयुक्त लगता है; क्योंकि अन्य शाखाओंकी प्रसिद्धि भी उनके प्रथम प्रवचनकर्ता आचार्योंके नामसे ही है।

यह शाखा भारतके विभिन्न प्रान्तोंमें विशेषतः उत्तर भारतमें तथा नेपालके सभी भागोंमें अपने वाड्मयविपुलताके साथ विस्तारित हो रही है। इस शाखाकी संहिता वाजसनेय-माध्यन्दिन-संहिताके नामसे प्रसिद्ध है।

माध्यन्दिन-संहिताका विभाग एवं चयनक्रम

माध्यन्दिन-संहिताका विभाग अध्यायों तथा कण्ठिकाओंमें है। इसमें ४० अध्याय हैं। इन अध्यायोंमें कुल मिलाकर ३०३ अनुवाक तथा १,९७५ कण्ठिकाएँ हैं। कण्ठिकाओंमें मन्त्रोंका विभाजन है, परंतु किस कण्ठिकामें कितने मन्त्र हैं, इसका संकेत संहितामें नहीं है। सर्वानुक्रमसूत्र तथा कात्यायन श्रौतसूत्रमें दिये गये मन्त्रविनियोगके आधारपर कण्ठिकागत मन्त्रोंकी संख्याका पता चलता है। महीधरने उसीके आधारपर कण्ठिकागत मन्त्रोंका उल्लेख किया है। अनुवाकसूत्राध्यायके अनुसार माध्यन्दिन-संहिताकी कण्ठिकाओं- का वर्गीकरण अनुवाकोंमें किया गया है।

प्रतिपाद्य विषय

वाजसनेयि-संहिता नामसे प्रसिद्ध इस संहिताके

चालीस अध्यायोंमें ३९ अध्यायोंका प्रमुख प्रतिपाद्य विषय श्रौतकर्मकाण्ड ही है। जिसके अन्तर्गत प्रथम एवं द्वितीय अध्यायोंमें दर्श-पूर्णमास तथा पिण्डपितृयज्ञ, तृतीय अध्यायमें अग्निहोत्र, चातुर्मास्य मन्त्रोंका संकलन, ४ से ८ तकमें सोमसंस्थाओंका वर्णन है। उसमें भी सभी सोमयागोंका प्रकृतियाग होनेके कारण अग्निष्टोमके विषयमें विस्तृत वर्णन है। ९ वें तथा १० वें अध्यायोंमें राजसूय और वाजपेयागका वर्णन है। ११ से १८ तकमें अग्निचयनका वर्णन है। इसीके अन्तर्गत १६वेंमें शतरुद्रिय होमके मन्त्र तथा १८वेंमें वसोर्धारा-सम्बद्ध मन्त्र हैं। १९ से २१वेंतकमें सौत्रामणी याग, २२ से २५ तकमें सार्वभौम क्षत्रिय राजाके द्वारा किये जानेवाले अक्षमेध-यागका वर्णन है। २६ से २९ तकमें खिल मन्त्रोंका संग्रह है। ३०वेंमें पुरुषमेध, ३१वेंमें पुरुषसूक्त, ३२ वें तथा ३३वें अध्यायोंमें सर्वमेध-विषयक मन्त्रोंका संकलन है। इसीके अन्तर्गत हिरण्यगर्भ सूक्त भी आता है। ३४वें के आरम्भमें शिवसङ्कल्पोपनिषद् है। इसका वर्णन अत्यन्त हृदयावर्जक है। ३५वेंमें पृथमेध तथा ३६ से ३९ तकमें प्रवर्यविषयक मन्त्र हैं। ४० वें अध्यायमें ईशावास्योपनिषद् उपदिष्ट है। यह उपनिषद् सभी उपनिषदोंमें प्रथम परिगणित है।

२-काण्व-शाखा—

शुक्लयजुर्वेदकी दूसरी उपलब्ध शाखा काण्व है। इसके प्रवचनकर्ता आचार्य कण्व हैं। काण्व-शाखाका प्रचार आजकल महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु, आन्ध्र तथा उड़ीसा आदि प्रान्तोंमें है। इसमें उत्कलपाठ और महाराष्ट्रपाठके रूपमें दो पाठ मिलते हैं।

माध्यन्दिन-संहिताकी तरह काण्व-संहितामें भी ४० अध्याय हैं, जो चार दशकोंमें विभक्त हैं। प्रत्येक अध्यायमें कई अनुवाक तथा प्रत्येक अनुवाकमें कई मन्त्र हैं। कुल अनुवाकोंकी संख्या ३२८ तथा मन्त्रोंकी संख्या २,०८६ है। माध्यन्दिन संहिताके सम्पादनमें अनुवाक-विभागको प्रमुखता नहीं दी गयी, किंतु काण्व-संहिताके सम्पादनमें अनुवाक-विभागको प्रधानता दी गयी है। अध्यायगत प्रत्येक अनुवाकोंकी मन्त्र-संख्या अनुवाकके साथ शुरू होती है और अनुवाकके साथ समाप्त होती है। इसके अतिरिक्त केवल मन्त्रात्मक अध्यायक्रम भी प्रचलित है। इस शाखाका अनुवाकाध्याय पृथक् उपलब्ध है।

काण्व-संहिताका प्रतिपाद्य विषय वही है, जो माध्यन्दिन-संहिताका है। केवल अध्याय या मन्त्रोंके

क्रममें दोनोंका अन्तर है।

शुक्लयजुर्वेदीय ब्राह्मण

समस्त ब्राह्मण ग्रन्थोंमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण, विपुलकाय, यज्ञानुशासनका सर्वोत्तम प्रतिपादक शुक्लयजुर्वेदीय शतपथब्राह्मण है। यह ब्राह्मण शुक्लयजुर्वेदकी काण्व तथा माध्यन्दिन दोनों शाखाओंमें उपलब्ध है। विषयकी एकता होनेपर भी उसके वर्णनक्रम तथा अध्यायोंकी संख्यामें अन्तर पड़ता है। माध्यन्दिनीय शतपथ-ब्राह्मणमें १४ काण्ड, १०० अध्याय, ४३८ ब्राह्मण तथा ७,६२४ कण्ठिकाएँ हैं। अतः सौ अध्यायोंके आधारपर 'शतपथ' नाम हुआ है—'शतं पन्थानो यस्य तच्छतपथम्'। यहाँ 'पथि' शब्द अध्यायका वाचक है। यद्यपि काण्व-शाखाके शतपथमें १७ काण्ड, १०४ अध्याय, ४३५ ब्राह्मण तथा ६,८०६ कण्ठिकाएँ हैं, तथापि वहाँ 'छत्रिन्याय' से 'शतपथ'-की संज्ञा अन्वर्थ हो जाती है। माध्यन्दिन शतपथमें ६८ प्रपाठक हैं, किंतु काण्व-शतपथमें प्रपाठक नहीं हैं।

विषयक्रम

माध्यन्दिन शतपथमें प्रथम काण्डसे आरम्भ कर नवम काण्डतक पिण्डपितृयज्ञको छोड़कर विषयोंका क्रम माध्यन्दिन संहिताके अनुसार ही है। पिण्डपितृयज्ञका वर्णन संहितामें दर्शपूर्णमासके अनन्तर है, परंतु ब्राह्मणमें आधानके अनन्तर। इसके अतिरिक्त अवशिष्ट सभी काण्डोंमें संहिताका क्रम अङ्गीकृत किया है। दोनों शतपथोंके आरम्भमें ही कुछ अन्तर दृष्टिगोचर होता है। माध्यन्दिन शतपथके प्रथम काण्डका विषय (दर्शपूर्णमास) काण्वके द्वितीय काण्डमें है और द्वितीय काण्डका विषय काण्वके प्रथम काण्डमें समाविष्ट है। अन्यत्र विषय उतने ही हैं, परंतु उनका क्रम दोनोंमें भिन्न-भिन्न है।

वैशिष्ट्य

शतपथ-ब्राह्मणमें यज्ञोंके नाना रूपों तथा विविध अनुष्ठानोंका जिस असाधारण परिपूर्णताके साथ निरूपण है, वह अन्य ब्राह्मणोंमें नहीं है। आध्यात्मिक दृष्टिसे भी यज्ञोंके स्वरूपनिरूपणका श्रेय इस ब्राह्मणको प्राप्त है। शतपथने यज्ञ-मीमांसाका प्रारम्भ हविर्यागोंसे किया है, जिनका आधार अग्निहोत्र है। अग्निहोत्रीको अग्नि मृत्युके पश्चात् भी नष्ट नहीं करता, अपितु माता-पिताके समान नवीन जन्म देता है। अग्निहोत्रीके लिये अग्नि स्वर्ग ले जानेवाली नौकाके सदृश है—'नौर्ह वा एषा स्वर्ग्या। यदग्निहोत्रम्' (श० ब्रा० २। ३। ३। १५)। शतपथने

यज्ञको जीवनका सबसे महत्त्वपूर्ण कृत्य बतलाया है—'यज्ञो वै श्रेष्ठतमं कर्म' (श० ब्रा० १। ७। ३। ५)। तदनुसार जगत् अग्निषोमात्मक है। सोम अन्न है और अग्नि अन्नाद। अग्नीरूपी अन्नाद सोमरूपी अन्नकी आहुति ग्रहण करता है। यही क्रिया जगत्में सतत विद्यमान है। इस ब्राह्मणमें यज्ञकी प्रतीकात्मक व्याख्याएँ भी हैं। एक रूपकके अनुसार यज्ञ पुरुष है, हविर्दान उसका सिर, आहवनीय मुख, आग्नीध्रीय तथा मार्जलीय दोनों बाहुएँ हैं। इस प्रकार यज्ञका दैविक स्वरूप निर्धारित किया गया है। (श० ब्रा० ३। ५। ३। १; ३। ५। ४। १)। यज्ञके नामकरणका हेतु उसका विस्तृत किया जाना है—'तद्यदेनं तन्वते तदेनं जनयन्ति स तायमानो जायते' (३। ९। ४। २३)।

इस प्रकार यज्ञिय अनुष्ठानोंके छोटे-से-छोटे विधि-विधानोंका विशद वर्णन, इन क्रियाओंके लिये हेतुका निर्देश, ब्राह्मणोचित आख्यायिकाओं यथास्थान निवेश तथा उनका सरस विवेचन इस ब्राह्मणके उत्कर्ष बतलानेके लिये पर्याप्त कारण माने जा सकते हैं।

शुक्लयजुर्वेदीय बृहदारण्यक

अधिकांश आरण्यक ब्राह्मण-ग्रन्थोंके अन्तिम भाग हैं, इसलिये प्रायः ब्राह्मण-ग्रन्थोंके प्रवचनकर्ता ही आरण्यकोंके भी प्रवचनकर्ता हैं। अतः शुक्लयजुर्वेदीय 'बृहदारण्यक'-के प्रवचनकर्ता आचार्य भी महर्षि याज्ञवल्क्य हैं। शुक्लयजुर्वेदीय शतपथ-ब्राह्मण माध्यन्दिन शाखाका १४ वाँ काण्ड तथा काण्व-शाखाका १७ वाँ काण्ड शुक्लयजुर्वेदका आरण्यक ग्रन्थ है। विषयकी दृष्टिसे आरण्यक और उपनिषदमें साम्य होनेसे बृहदारण्यक आदि आरण्यक ग्रन्थोंको उपनिषद् भी माना जाता है, किंतु वर्ण्य विषयकी किञ्चित् समानता होनेपर भी दोनोंका पार्थक्य लक्षित होता है। आरण्यकका मुख्य विषय प्राणविद्या तथा प्रतीकोपासना है। इसके विपरीत उपनिषद्का वर्ण्य विषय निर्गुण ब्रह्मके स्वरूप तथा उसकी प्राप्तिका विवेचन है। अतः विषयभेदके अनुसार दोनोंमें भेद है, किंतु दोनों रहस्यात्मक विद्या होनेके कारण समान भी हैं।

आरण्यकका मुख्य विषय यज्ञ नहीं, अपितु यागोंके भीतर विद्यमान आध्यात्मिक तथ्योंकी मीमांसा है। अतः शुक्लयजुर्वेदीय बृहदारण्यक भी इसीका प्रतिपादन करता है।

उपनिषद्

मुक्तिकोपनिषद् (शुक्लयजुर्वेदीय)-के अनुसार शुक्लयजुर्वेदसे सम्बद्ध १९ उपनिषद् हैं। जिनमें प्रमुख

ईशावास्योपनिषद् और बृहदारण्यकोपनिषद् हैं।

शुक्लयजुर्वेदीय कात्यायन श्रौतसूत्र

शुक्लयजुर्वेदीय श्रौतसूत्रोंमें आजकल उपलब्ध एकमात्र श्रौतसूत्रका नाम 'कात्यायन श्रौतसूत्र' है। यह ग्रन्थ श्रौतसूत्रोंमें अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। श्रौतसूत्रके स्वरूपको जाननेके लिये कात्यायन श्रौतसूत्र प्रतिनिधिमूलक ग्रन्थ है। श्रौतसूत्रोंका मुख्य उद्देश्य श्रौतयागोंका संक्षिप्त सुव्यवस्थित क्रमबद्ध प्रतिपादन है। इसी उद्देश्यको ध्यानमें रखकर महर्षि कात्यायनने ब्राह्मणोंमें उपलब्ध मूल सामग्रीका कहीं विस्तार तथा कहीं संक्षेप कर उन्हें बोधगम्य तथा सरल बनानेका सफल प्रयास किया है।

चरणव्यूह क्रम २ के अनुसार कात्यायन श्रौतसूत्र शुक्लयजुर्वेदसे सम्बद्ध १५ शाखाओंके लिये प्रवृत्त है। इन शाखाओंमें भी विशेषतः काण्व और माध्यन्दिन दो ही शाखासे सम्बद्ध है। काण्व और माध्यन्दिन दो शाखाओंमें जो क्रम है, उसी क्रमको ग्रहण करके यह सूत्र प्रवृत्त हुआ है।

प्रतिपाद्य विषय

कात्यायन श्रौतसूत्र २६ अध्यायोंमें विभक्त है और इसमें अध्यायोंकी अवान्तर कण्ठिकाएँ भी हैं। प्रथम अध्यायमें कात्यायन श्रौतसूत्रमें प्रतिपादित पदार्थोंके ज्ञानके लिये पारिभाषिक विषयोंका प्रतिपादन है। द्वितीय एवं तृतीय अध्यायोंमें दर्शपूर्णमासका साङ्गोपाङ्ग निरूपण, चतुर्थ अध्यायमें पिण्डपितृयज्ञ, वत्सापाकरण, विकृतियागोंमें दर्शपूर्णमासोंका अतिदेश, दाक्षायण, आग्रयणेष्टि, अन्वारम्भणेष्टि, अग्न्याधान, पुनराधान और अग्निहोत्रका निरूपण है। ५वेंमें चातुर्मास्य याग, मित्रविदेष्टि, ६ठेमें प्रतिवर्षमें अनुष्ठेय निरूद्धपशुबन्ध, ७ से ११ तक सोमयाग, १२वेंमें द्वादशाह, १३वेंमें गवामयन, १४वेंमें वाजपेय, १५वेंमें राजसूय, १६ से १८ तक अग्निचयन, १९वेंमें सौत्रामणी, २०वेंमें अश्वमेध, २१वेंमें पुरुषमेध, सर्वमेध, पितृमेध, २२वेंमें एकाह, २३वेंमें अहीनयाग, २४वेंमें सत्रयाग, २५वेंमें प्रायश्चित्त और २६वेंमें प्रवर्ग्यका प्रतिपादन है।

शुक्लयजुर्वेदीय कुछ ग्रन्थोंका विवरण

शुक्लयजुर्वेदीय गृह्यसूत्रोंमें आजकल उपलब्ध तथा विशेषरूपमें प्रचलित 'पारस्कर गृह्यसूत्र' ही है। इसके अतिरिक्त 'बैजवाप गृह्यसूत्र' का उल्लेख भी कहीं-कहीं मिलता है। पारस्कर गृह्यसूत्र तीन काण्डोंमें विभक्त है। प्रथम काण्डमें अवस्थाधान, विवाह और गर्भाधानादिका वर्णन, द्वितीय काण्डमें चूडाकरण, उपनयन, समावर्तन,

पञ्चमायज्ञ, श्रवणाकर्म, सीतायज्ञादिका विवरण तथा तृतीय काण्डमें अवकीर्णप्रायश्चित्तादिका विधान है। इसमें कर्क, ज्यराम, हरिहर, गदाधर तथा विश्वनाथके पाँच भाष्य उपलब्ध हैं।

महर्षि कात्यायनद्वारा संकलित 'कात्यायन श्राद्धसूत्र' (कातीय श्राद्धसूत्र) श्राद्धविषयका वर्णन करता है। इसमें ९ कण्ठिकाएँ हैं। इसमें कर्क, गदाधर तथा कृष्ण मित्रके तीन भाष्य (टीका) उपलब्ध हैं। इसी तरह कात्यायनरचित 'शुल्बसूत्र' भी काशीसे प्रकाशित हुआ है, जिसमें सात कण्ठिकाएँ हैं। शुक्लयजुर्वेदका प्रतिशाख्य 'वाजसनेयप्रतिशाख्य' नामसे प्रसिद्ध है। इसके रचयिता महर्षि कात्यायन हैं। ८ अध्याय तथा ७३४ सूत्रोंमें विभक्त वाजसनेयप्रतिशाख्यका मुख्य विषय वर्ण, स्वर, संधि, पदपाठ और क्रमपाठका विचार करना है। इस प्रतिशाख्यके परिशिष्टके रूपमें दो सूत्र उपलब्ध होते हैं—(१) प्रतिज्ञासूत्र और (२) भाषिक सूत्र। शुक्लयजुर्वेदसे सम्बद्ध स्वरादि-सम्बन्धी नियमोंका विवरण प्रतिज्ञासूत्रमें दिया गया है। भाषिक सूत्रमें प्रधानतया शतपथ-ब्राह्मणके स्वर-संचारका विधान है।

शिक्षा-विषयक ग्रन्थोंमें शुक्लयजुर्वेदसे सम्बद्ध कई शिक्षाएँ हैं, जिनमें याज्ञवल्क्य शिक्षा अधिक प्रचलित है। परिशिष्टोंमें शुक्लयजुर्वेदके १८ परिशिष्ट प्रसिद्ध हैं।

[ख] कृष्णयजुर्वेदका परिचय

कृष्णयजुर्वेदके ८६ शाखाओंमें आज केवल ४ शाखाएँ उपलब्ध हैं—(१) तैत्तिरीय शाखा, (२) मैत्रायणी शाखा, (३) कठशाखा और (४) कपिष्ठल शाखा। इनका संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करनेका प्रयास किया जा रहा है—

१-तैत्तिरीय शाखा—

शुक्लकृष्ण-यजुषोंके भेद-निरूपणमें याज्ञवल्क्यके वर्मन किये हुए यजुषोंको वैशम्यायनके अन्य शिष्योंके तित्तिरिरूप धारण करके वान्त यजुषोंका भक्षण करनेसे उन यजुषोंका कृष्णत्व हो गया—ऐसा जो इतिवृत्त सम्प्रति उपलब्ध होता है, वह सर्वाशतः वैदिक लोगोंके लिये रुचिकर नहीं हो सकता है; क्योंकि इतिवृत्तोंमें रूपकल्प सम्भव होनेसे, विद्याका मूर्त-रूपसे वर्मन तथा वान्तग्रहण लोकसम्मत नहीं होनेसे और संहिताओंमें ऐसा इतिवृत्त उपलब्ध नहीं होनेसे उक्त हेतु अपर्याप्त है। अनन्यरूप ब्राह्मण-आरण्यकादि अनादि वेदभागोंमें तैत्तिरीय संज्ञा ही उपलब्ध होनेसे उन इतिवृत्तोंका परिकालिकत्व

स्वीकार करना चाहिये। अन्यथा वेदोंके अनादित्वका हनन हो जायगा। इसलिये तैत्तिरीय अभिधानमें अन्य हेतुओंका अवलम्बन करना पड़ेगा। 'वेदशाखापर्यालोचनम्' में इससे सम्बन्धित निम्र हेतुओंको उपस्थिति किया गया है—

[१] कृष्णयजुर्वेदमें मन्त्र, ब्राह्मण और आरण्यक एक साथ ही पढ़े जाते हैं। अतः 'त्रीणि मन्त्रब्राह्मणारण्यकानि यस्मिन् वेदशब्दराशौ सह तरन्ति पठ्यन्ते, असौ तित्तिरिः' ऐसी व्युत्पत्ति कर सकते हैं। शौनकीय चरणव्यूह परिशिष्ट—२ में यजुर्वेदका लक्षण बताते हुए इसी भावको स्पष्ट किया गया है—

त्रिगुणं पञ्चते यत्र मन्त्रब्राह्मणयोः सह ।

यजुर्वेदः स विज्ञेयः शेषाः शाखान्तराः स्मृताः ॥

—इस कथनका प्रायः यह अभिप्राय लिया जाता है कि जहाँ मन्त्र और ब्राह्मणका एक साथ त्रिगुण पाठ (संहिता-पद-क्रम) किया जाता है, उसे यजुर्वेद जानना चाहिये।

[२] तैत्तिरीयक मन्त्र और ब्राह्मणका सांकर्य स्पष्ट ही है। अतः तीन मन्त्र, ब्राह्मण और आरण्यक जिस शाखा या वेदभागमें छिपे हुएकी तरह सम्मिश्रितरूपमें अन्तर्हित हैं, वह वेदभाग या शाखा तैत्तिरीयके रूपमें व्यवहृत किया जाता है।

[३] तीसरा मान्य हेतु यह भी हो सकता है कि तित्तिरि नामक आचार्यके द्वारा प्रवचन किये हुए यजुषों तथा उनके अनुयायी लोगोंको तैत्तिरीय ऐसा नाम दिया है।

तैत्तिरीय संहिता—

कृष्णयजुर्वेदीय तैत्तिरीय संहिताका प्रसारदेश दक्षिण भारत है। कुछ महाराष्ट्र प्रान्त तथा समग्र आन्ध्र-द्रविड देश इसी शाखाका अनुयायी है। इस शाखाने अपनी संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद्, श्रौतसूत्र तथा गृह्यसूत्र—इन सभीको बड़ी तत्परतासे अक्षुण्ण बनाये रखा है।

इसके स्वरूपके विषयमें विद्वानोंमें मतैक्य नहीं है। तैत्तिरीय संहितामें सारस्वत तथा आर्षेयके रूपमें दो पाठभेद हैं। आज इस शाखाकी जो संहिता उपलब्ध है, वह सारस्वत-परम्पराकी मानी जाती है, जिसमें मन्त्र तथा ब्राह्मणका पूर्ण सांकर्य दिखायी पड़ता है। इस सारस्वतपरम्परामें मन्त्र-ब्राह्मणका सांकर्य होनेपर भी तैत्तिरीय संहिता, तैत्तिरीय ब्राह्मण तथा तैत्तिरीय आरण्यक अलग-अलग छपे हैं। इस परम्परामें उपलब्ध तैत्तिरीय संहितामें कुल ७ काण्ड, ४४ प्रपाठक, ६५१ अनुवाक हैं। चरणव्यूहमें

४४ प्रपाठकोंके स्थानपर ४४ प्रश्नोंका उल्लेख किया गया है। इस प्रकार यहाँ प्रपाठक और प्रश्न—इन दोनोंको एक ही समझना चाहिये।

तैत्तिरीय-परम्परामें बौधायन, आपस्तम्ब, सत्याषाढ आदि आचार्योंके द्वारा तैत्तिरीय संहिताके आर्षेय पाठक्रमका भी स्पष्ट उल्लेख किया गया है। इस पाठक्रमके अनुसार संहिता, ब्राह्मण तथा आरण्यक—ये तीनों अलग-अलग ग्रन्थ नहीं; अपितु तीनों मिलकर तैत्तिरीय-यजुर्वेद कहलाते हैं। काण्डानुक्रमणीके अनुसार यह पाँच काण्डोंमें विभक्त है—(१) प्राजापत्य-काण्ड, (२) सौम्य-काण्ड, (३) आग्नेय-काण्ड, (४) वैश्वदेव-काण्ड और (५) स्वायम्भुव-काण्ड।

२-मैत्रायणीय शाखा—

कृष्णयजुर्वेदकी शाखाओंमें मैत्रायणीय शाखा अन्यतम है। इसकी मैत्रायणीय संहिता है। 'मित्र्यु' नामक आचार्यके प्रवचन करनेके कारण इसका नाम मैत्रायणी हो गया होगा। पाणिनिने अपने गणपाठमें मैत्रायणका उल्लेख किया है। हरिवंशपुराणमें इस प्रकारका उल्लेख मिलता है—

मैत्रायणी ततः शाखा मैत्रेयास्तु ततः स्मृताः ॥

मैत्रायणी-संहिता गद्य-पद्मात्मक है। अन्य कृष्णयजुर्वेदीय संहिताओंके समान इसमें भी मन्त्र तथा ब्राह्मणोंका सम्मिश्रण है। यह संहिता क्रमशः प्रथम (आदिम), द्वितीय (मध्यम), तृतीय (उपरि) और चतुर्थ (खिल) इस प्रकार चार काण्डोंमें विभक्त है। प्रथममें ११ प्रपाठक, मध्यममें १३ प्रपाठक, उपरिमें १६ तथा खिलकाण्डमें १४ प्रपाठक हैं। इस प्रकार कुल प्रपाठक-संख्या ५४ है और प्रत्येक प्रपाठक अनुवाकों तथा कण्डकाओंमें विभक्त है। कुल मिलाकर प्रथम काण्डमें ११ प्रपाठक, १६५ अनुवाक और ६९५ कण्डिकाएँ हैं। द्वितीय काण्डमें १३ प्रपाठक, १५१ अनुवाक, ७८३ कण्डिका तथा तृतीय काण्डमें १६ प्रपाठक, १८० अनुवाक और ४८५ कण्डिका तथा चतुर्थ काण्डमें १४ प्रपाठक, १५८ अनुवाक, १,१८१ कण्डिकाएँ हैं। इस प्रकार पूरी संहितामें ५४ प्रपाठक, ६५४ अनुवाक और ३,१४४ कण्डिकाएँ हैं।

इस शाखाके प्रतिपाद्य विषयोंमें मुख्यतः दर्शपूर्ण-मासेष्टि, ग्रहग्रहण अग्न्युपस्थान, अग्न्याधान, पुनराधान, अग्निहोत्र, चातुर्मास्य, वाजपेय, काम्येष्टियाँ, राजसूय, अग्निचिति, सौत्रामणी तथा अश्वमेधका विवेचन है। कृष्णयजुर्वेदकी अन्य शाखाओंकी तरह इसमें भी यज्ञोंके विवेचनमें व्यवस्थित क्रम नहीं है। मैत्रायणी-संहितामें कुछ

ऐसे विषयोंका विवेचन है, जो अन्यत्र उपलब्ध नहीं होते। उदाहरणके लिये गोनामिक प्रकरण (मै० सं० ४।२)-में गायके विभिन्न नामोंका उल्लेख करते हुए उसकी महिमाका विवेचन किया गया है।

३-कठशाखा—

कृष्णयजुर्वेदकी उपलब्ध शाखाओंमें कठशाखा भी एक है। इसका प्रवचन कठ नामक आचार्यने किया है। इसी कारण इस शाखाकी संहिताका नाम 'काठक संहिता' है। कृष्णयजुर्वेदकी २७ मुख्य शाखाओंमें काठक संहिता (कठशाखा) भी अन्यतम है। पतञ्जलिके कथनानुसार कठशाखाका प्रचार तथा पठन-पाठन प्रत्येक ग्राममें था—ग्रामे ग्रामे काठकं कालापकं च प्रोच्यते (महाभाष्य)। जिससे प्राचीन कालमें इस शाखाके विपुल प्रचारका पूर्ण परिचय प्राप्त होता है, परंतु आजकल इसके अध्येताओंकी संख्या तथा इसके प्रचारवाले प्रान्तका भी पता नहीं चलता। कठ ऋषिका विशेष इतिवृत्त ब्रह्मपुराणके अन्तर्गत गोदामाहात्म्यके ५० वें अध्यायमें वर्णित है। जिसके अनुसार काठकोंका मूल स्थान गोदा नामक नदीका दक्षिणाग्नेय तटवर्ती देश था।

काठक-संहिताका स्वरूप मन्त्रब्राह्मणोभयात्मक है। यह संहिता इठिमिका, मध्यमिका, ओरिमिका, याज्ञानुवाक्या तथा अश्वेधाद्यनुवचन—इन पाँच खण्डोंमें विभक्त है। इन खण्डोंके टुकड़ोंका नाम 'स्थानक' है। कुल स्थानकोंकी संख्या ४०, अनुवाचनोंकी १३, अनुवाकोंकी ८४३, मन्त्रोंकी ३,०९१ तथा मन्त्रब्राह्मणोंकी सम्मिलित संख्या १८ हजार है।

४-कपिष्ठल शाखा—

कपिष्ठल ऋषिके द्वारा प्रोक्त यजुषोंका नाम कपिष्ठल है। कपिष्ठलका नाम पाणिनिने 'कपिष्ठलो गोत्रे' (८।३।११) सूत्रमें किया है। इसमें 'कपिष्ठल' शब्द गोत्रवाची है। सम्भवतः कपिष्ठल ऋषि ही इस गोत्रके प्रवर्तक थे। निरुक्तके टीकाकार दुर्गाचार्यने अपनेको कपिष्ठल वासिष्ठ बताया है—'अहं च कपिष्ठलो वासिष्ठः' (निरुक्तटीका)।

कपिष्ठल-संहिता आज पूर्णरूपसे उपलब्ध नहीं है। अतः उसके स्वरूपके विषयमें जानकारी नहीं दी जा सकती। आचार्य बलदेव उपाध्यायकी पुस्तक 'वैदिक साहित्य और संस्कृति' के अनुसार वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालयके 'सरस्वतीभवन' पुस्तकालयमें इसकी एक ही अधूरी प्रति उपलब्ध होती है। इस प्रतिके आधारपर

डॉ० श्रीघुवीरजीने इसका एक सुन्दर संस्करण लाहौरसे प्रकाशित किया है। श्रीउपाध्यायके अनुसार काठक-संहितासे इस संहितामें अनेक बातोंमें पार्थक्य तथा वैभिन्न्य है। इसकी मूल संहिता काठक-संहिताके समान होनेपर भी उसकी स्वराङ्कन-पद्धति ऋग्वेदसे मिलती है। ऋग्वेदके समान ही यह अष्टक तथा अध्यायोंमें विभक्त है।

कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मण

कृष्णयजुर्वेदीय शाखाओंमें अद्यावधि पूर्णरूपसे उपलब्ध तथा अधिक महत्वशाली एकमात्र ब्राह्मण 'तैत्तिरीय ब्राह्मण' है। 'काठक ब्राह्मण' का भी नाम सुना जाता है, परंतु वह उपलब्ध नहीं है। शतपथ ब्राह्मणके सदृश तैत्तिरीय ब्राह्मण भी सस्वर है।

विभाग

तैत्तिरीय ब्राह्मणका विभाग तीन भाग या काण्डोंमें हुआ है। इसीको 'अष्टक' भी कहते हैं। प्रथम दो काण्डोंमें आठ-आठ अध्याय अथवा प्रपाठक हैं। तृतीय काण्डमें बारह अध्याय या प्रपाठक हैं। भट्टभास्करने इन्हें 'प्रश्न' भी कहा है। इसका एक अवान्तर विभाजन अनुवाकोंका भी है, जिनकी संख्या ३५३ है।

प्रतिपाद्य

आचार्य सायणके अनुसार यजुर्वेदसे यज्ञशरीरकी निष्पत्ति होती है। अतः यजुर्वेदीय होनेके कारण तैत्तिरीय ब्राह्मणमें अध्वर्युकर्तृक सम्पूर्ण क्रियाकलापोंका वर्णन विस्तारसे हुआ है। संक्षेपमें इसके प्रतिपाद्य विषयोंमें अग्न्याधान, गवामयन, वाजपेय, नक्षत्रेष्टि तथा राजसूय आदि यागोंका वर्णन प्रथम काण्डमें है। द्वितीय काण्डमें अग्निहोत्र, उपहोम, सौत्रामणी तथा बृहस्पतिसव प्रभृति विभिन्न सर्वोंका निरूपण है। तृतीय काण्डमें नक्षत्रेष्टियों तथा पुरुषमेधसे सम्बद्ध विवरण है।

उपर्युक्त विषयोंके अतिरिक्त भरद्वाज, नचिकेता, प्रह्लाद और अगस्त्य-विषयक आख्यायिकाएँ, सत्यभाषण, वाणीकी मधुरता, तपोमय जीवन, अतिथिसत्कार, संगठनशीलता, सम्पत्तिका परोपकार-हेतु विनियोग, ब्रह्मचर्य-पालन आदि आचार-दर्शन तथा सृष्टिविषयक वर्णन इसका उल्लेख्य पक्ष है।

कृष्णयजुर्वेदीय अन्य उपलब्ध प्रमुख ग्रन्थ

कल्प—कृष्णयजुर्वेदीय कल्पग्रन्थोंमें बौधायन, आपस्तम्ब, सत्याषाढ़, मानव, वैखानस, भारद्वाज और वाराह—इन सात श्रौतसूत्रों तथा बौधायन, आपस्तम्ब,

सत्याषाढ, मानव और काठक—इन पाँच गृह्णसूत्रों एवं ‘व्यासशिक्षा’ भी कृष्णयजुर्वेदसे सम्बद्ध है। प्रातिशाख्योंमें बौधायन, आपस्तम्ब और सत्याषाढ—इन तीन धर्मसूत्रों तथा बौधायन, आपस्तम्ब और मानव—इन तीन शुल्बसूत्रोंकी प्रभूत संख्या उपलब्ध होती है।

शिक्षा-ग्रन्थ—कृष्णयजुर्वेदीय शिक्षा-ग्रन्थोंमें तैत्तिरीय शाखासे सम्बद्ध ‘भरद्वाज-शिक्षा’ उपलब्ध है। यह ‘संहिता-शिक्षा’ के नामसे भी व्यवहृत है। दूसरी

‘तैत्तिरीय प्रातिशाख्य’ उपलब्ध है।

आरण्यक—आरण्यक ग्रन्थोंमें ‘तैत्तिरीय आरण्यक’ प्रसिद्ध है। उपनिषदोंमें मुक्तिकोपनिषद् के अनुसार कृष्णयजुर्वेदसे सम्बद्ध ३२ उपनिषद् हैं। इनमें तैत्तिरीय उपनिषद्, मैत्रायणी उपनिषद्, कठोपनिषद् और श्वेताश्वतरोपनिषद् प्रमुख माने जाते हैं।

~~~~~

कृद्य कथाङ्क (कृत्याण-गीतांशु)